शोध पत्र-संस्कृत

संस्कृत वाङ्मय में 'स्वाध्याय' का महत्व

* डॉ. सुभाष चन्द्र शास्त्री

December, 2010

* व्यख्याता संस्कृत, राजकीय महाविद्यालय, बहरोड़

भारतीय मनीषियों ने प्राचीन काल से ही स्वाध्याय को विशेष महत्त्व दिया है। स्वाध्याय को भगवान् याज्ञवल्क्य ने परमश्रम, राजर्षि मनु ने परमतप, मुनिवर पतजलि ने परमयोग, उपनिषद्कार ने परम स्कन्ध, महर्षि दयानंद ने परमधर्म और भगवती श्रुति ने परम रस कहा है, जिसकी महिमा का गान करते हुए शास्त्रकार नहीं अघाते और जो प्रत्येक आश्रमवासी व्यक्ति के लिए पालनीय एवं द्विजों के लिए आचरणीय है।

स्वाध्याय शब्दस्वरूप –स्वाध्याय शब्द सु+आङ्+अधि पूर्वक इङ् अध्ययने धातु से घञ् प्रत्यय करके बनता है। इसके अर्थ को समझने के लिए इसमें प्रयुक्त धातु, उपसर्ग और प्रत्यय के अर्थों को समझना चाहिए। इसमें अधि पूर्वक इङ् धातु का प्रयोग है जिसका अर्थ अध्ययन ही है। इङ् अध्ययने, अर्थात् इङ् धातु के अर्थ 'अध्ययन' में भी अधि उपसर्ग लगा हुआ है। इसका अभिप्राय यही होना चाहिए कि अध्ययन अर्थ केवल इङ् धातु का नही अपितु अधिपूर्वक इङ् धातु का है। धातु और अर्थ दोनों से 'अधि' उपसर्ग हटाया तो दोनों का मूलरूप सामने आया–धातु का 'इङ्' रूप एवं अर्थ का 'अयन' रूप। अर्थ के मूलरूप अयन को समझ लेने के पश्चात् यह भी समझना चाहिए कि अधि उपसर्ग के बल से अयन का अर्थ अध्ययन कैसे हुआ। अध्ययन का अभिप्राय यह होना चाहिए कि अध्येता जिस ग्रंथ का स्वाध्याय कर रहा है उसमें उसका अथवा अबाध गति होना चाहिए। इसकी पुष्टि पारंगत शब्द से होती है क्योंकि यदि कोई व्यक्ति किसी विद्या में पूर्ण ज्ञान रखता है तो उसे उस विद्या में पूर्ण ज्ञान रखता है तो उसे उस विद्या में पारंगत कहते हैं। यहां एक और भी प्रयोग किया जा सकता है यदि हम 'इण् गतौ' धातु से भी स्वाध्याय शब्द का निर्माण करते हैं तो और भी उत्कृष्टता आ सकती है क्योंकि ''गतेस्त्रयोऽर्थाः ज्ञानं गमनं प्राप्तिश्चेति।'' इससे यह स्पष्ट हुआ कि स्वाध्याय वह प्रकिया है जिसमें उत्तम रूप से मर्यादित एवं अधिकृत रूप से ज्ञान, उसमें प्रगति एवं उसके पश्चात् सुफल प्राप्ति निहित हो। स्मृतिकारों एवं शास्त्रकारों ने वेद के लिए आगम शब्द का प्रयोग किया है। इससे यह विदित होता है कि''इण् गतौ' धातु से स्वाध्याय शब्द का प्रयोग बना लें तो अशुद्ध न होगा।आचार्य यास्क ने निरूक्त में 'निगम' शब्द का भी प्रयोग किया है। इसमें भी गमनार्थक धातु का ही प्रयोग है। यास्क ने कहा वेदार्थ करते हुए अर्थनित्यः परीक्षेत अर्थ को मुख्य मानकर निर्वचन कर लेना चाहिए। यहां पर हमें भी अभीष्ट है कि–'अध्येता' की स्वाध्याय करते हुए उसमें अबाध गति का होना।

अध्याय शब्द वेदवाचक है–

स्वाध्याय शब्द में प्रयुक्त 'अध्याय' शब्द वेद का वाचक है। आचार्य यास्क निरूक्त में– तेषामेते चत्वार उपमार्थे भवन्ति। इवेति भाषायां च अन्वध्यायं च' प्रयोग करते हैं जिसका अर्थ है–'चार निपात उपमार्थ में प्रयुक्त होते हैं। 'इव' निपात भाषा में एवं अन्वध्यायम् (अनु+अध्यायम्) अर्थात् वेद में भी प्रयुक्त होता है। याज्ञवल्क्यस्मृति में लिखा है–''अधीयन्ते इत्यध्याया वेदास्तेषां संस्कारमुपाकर्माख्यं कर्म।''अतः यह स्पष्ट है कि अध्याय वेदवाचक है। यदि स्वाध्याय शब्द का विग्रह ''स्वस्य अध्यायः स्वाध्यायः'' ऐसा करें तो इसका अर्थ होगा अपना अध्ययन अर्थात् अपने आप का अध्ययन–आत्मनिरीक्षण, आत्मचिन्तन। वह भी एक स्वाध्याय है। स्वाध्याय पर शास्त्रों एवं शास्त्रकारों की उक्ति

1. ऋग्वेद–

पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम्।।

जो व्यक्ति ऋषियों द्वारा सम्यक् भरण की गई रसयुक्त पवित्र ऋचाओं का स्वाध्याय करता है उसके लिए वेदरस से युक्त वाणी दुग्ध, घृत, मधु और उत्तम पेय पदार्थों से परिपूर्ण कर देती है। और भी–स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ताम्..। इत्यादि बहुत सी ऋचाएं स्वाध्याय के महत्त्व को बताती हैं।

2.मनु–

राजर्षि मनु स्वाध्याय को परमश्रम कहते हैं–

योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरूते श्रमम्।
स जीवन्नेव शूद्रत्वम् आशु गच्छति सान्वयः।।

अर्थात् जो द्विज वेद–स्वाध्याय रूपी श्रम को न करके अन्यत्र श्रम करता है वह शीघ्र ही शूद्रत्व को प्राप्त होता है। सभी आश्रमों के व्यक्तियों के लिए भी स्वाध्याय करना अत्यावश्यक है। यहां तक कि सर्वस्वत्याग करने वाले चतुर्थाश्रमी व्यक्ति के लिए भी निर्देश है–

''संन्यसेत् सर्वकर्माणि वेदमेकं न संन्यसेत्।''

यदि कोई व्यक्ति ब्राह्मणत्व प्राप्त करना चाहता है तो उसके लिए भी स्वाध्याय ही परम आवश्यक है–

स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं कियते तनुः।।

और भी–

वेदमेव सदाभ्यसेत्तपस्तप्स्यन् द्विजोत्तमः।
वेदाभ्यासो हि विप्रस्य तपः परमिहोच्यते।।

3.याज्ञवल्क्य–

स्वाध्याय परमश्रम है। द्यावापृथिवी में जितने भी श्रम गिनाये जा सकते हैं उनमें स्वाध्याय सभी की पराकाष्ठा है। याज्ञवल्क्य कहते हैं–''ये ह वै के च श्रमाः। इमे द्यावापृथिवी अन्तरेण स्वाध्यायो ह वै तेषां परमता काष्ठा।और भी–''यदि ह वा अप्यभ्यक्तः। अलंकृतः सुहितः सुखे शयने शयानः स्वाध्यायमधीत आ है व स नखाग्रेभ्यः तप्यते।'' यदि कोई व्यक्ति मालिश कर शृंगार किये हुए अच्छी प्रकार से सुखदायक विछौने पर लेटा हुआ भी स्वाध्याय करता है तो वह नख से लेकर शिखा पर्यन्त तप कर रहा है।

4.महर्षि दयानंद–

वेदों के मर्मज्ञ विद्वान, वेदोद्धारक ऋषि दयानंद ने आर्यसमाज के तृतीय नियम में वेद के स्वाध्याय को अनिवार्य बताते हुए कहते हैं–''वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।''अतः वैदिक ग्रन्थों का स्वाध्याय प्रत्येक व्यक्ति को दैनिक कार्य के समान मानते हुए अवश्य करना चाहिए।

5.उपनिषद्–

छान्दोग्य उपनिषद् के ऋषि ने धर्मरूपी वृक्ष के स्कन्धों का वर्णन करते हुए स्वाध्याय को प्रथम स्कन्ध में समाविष्ट किया है–''त्रयो धर्मस्कन्धा यज्ञोऽध्ययनं दानमिति प्रथमस्तप एव द्वितीयो ब्रह्मचर्याचार्यकुलवासी तृतीयः'' ।जो व्यक्ति स्वाध्याय स्कन्ध को अपने जीवन का आधार बनाते हैं, उनके परिवार में धर्मानुकूल अर्थ और काम की शाखाएं फूटती हैं और उनमें यश और पुण्य के पुष्प फल लगते हैं।

6.पतन्जलि–

योगदर्शनकार महर्षि पतञ्जलि ने यमादि अष्टांगों में द्वितीय नियमों में स्वाध्याय को स्थान दिया है–

''शौच–सन्तोष–तपः–स्वाध्याय ईश्वरप्रणिधानानि नियमाः।''जिस प्रकार कोई व्यक्ति नियमों को तोड़ता हुआ दण्डभागी होता है उसी प्रकार से यह भी एक आवश्यक नियम है। उसका तोड़ना दण्डनीय अपराध है योगदर्शन के व्यासभाष्य में कहा–

स्वाध्यायात् योगमासीत योगात्स्वाध्यायमामनेत्।
स्वाध्याययोग–सम्पत्त्या परमात्मा प्रकाशते।।

स्वाध्याय कदापि त्याज्य नहीं–

आचार्य अपने स्नातक शिष्य को गुरूकुल से विदाई करते हुए अपने दीक्षान्त भाषण में कहता है–सत्यं वद, धर्मंचर स्वाध्यायान्मा प्रमद... स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्। तैत्तिरीय उपनिषद् के शिक्षाध्यायवल्ली नवम् अनुवाक स्वाध्याय के विषय में क्या नहीं कहा–

ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च। सत्यञ्च स्वाध्यायप्रवचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवचने च।अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवचने च। अग्निहोत्रञ्च स्वाध्यायप्रवचने च।अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवचनेच। मानुषञ्च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवचने च।

यहां ऋत, सत्य, तप, दम, शम आदि गुणों को स्वाध्याय और प्रवचन के साथ जोड़ने के दो उद्देश्य हैं। प्रथम सत्य तप आदि गुणों को धारण करते हुए स्वाध्याय और प्रवचन करे। दूसरा– स्वाध्याय एवं प्रवचन करता हुआ ऋत शमदमादि को जाने। स्वाध्याय से ऋत शाश्वत नियमों को जाने।

शपथकार कहते हैं– ये नदियां निरन्तर बहती हैं सूर्य प्रत्यह उदित होता है। चन्द्रमा भी उदित होता है। ये सभी नक्षत्र व्रत पर चल रहे हैं। यदि कभी ये देव रूक जाएं तो प्रलय हो जायगा। इसी प्रकार यदि हम स्वाध्याय नहीं करेंगे तो हमारे जीवन में भी प्रलय हो जायगा। स्वाध्याय न करने से हमारा शील, व्रत चरित्र सब नष्ट हो जाएंगे। व्रत को प्रवहमान रखने के लिए एक वाक्य मात्र ही क्यों न हो उसका पठन एवं मनन अवश्य करे। शतपथ में कहा– तस्माद् अपि ऋचं वा यजुर्वा साम वा गाथां वा कुण्यां वा अभिव्याहरेत् व्रतस्य अव्यवच्छेदाय। शतपथ में कहा यथा देवयज्ञ (अग्निहोत्र) प्रतिदिन करना प्रत्येक मानवमात्र का कर्त्तव्य है उसी प्रकार स्वाध्याय–यज्ञ को प्रतिदिन करना कर्त्तव्य है। स्वाध्याय–यज्ञ को देवयज्ञ के रूप में प्रतिपादित किया है।

स्वाध्याय महत्त्व–

स्वाध्याय से व्यक्ति की आन्तरिक संस्कृति संस्कारित हो जाती है तथा वह अन्तर्मुखी होकर पवित्र विचारधारा में निमग्न रहता है। उसके पश्चात् उसकी बाह्य सभ्यता भी समाज एवं राष्ट्र के लिए उपकृत करने वाली एवं अनुकरणीय होती है और जहां संस्कृति+सभ्यता उत्तम हो जाते हैं वहां का आचरण सम्पूर्ण विश्व के लिए प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय हो जाते हैं। इसी से श्रेय एवं प्रेय की सिद्धि होती है। भगवान् याज्ञवल्क्य शतपथ में स्वाध्याय का महत्त्व उवं उसका लाभ बताते हुए कहते हैं–

1.युक्तमना भवति–

स्वाध्यायशील व्यक्ति मन को अपने नियन्त्रण में रखकर ही धर्म कार्यों में लगा सकता है। क्योंकि मन ही सबसे बड़ा शत्रु या मित्र है। कहा भी है–''मन एवं मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः।'' अर्जुन भी व्यथित होकर कहता है–

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम्।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम्।।

2.अपराधीनो भवति–

सर्वंपरवशंदुःखम्, सर्वमात्मवशं सुखम स्वाध्यायशील व्यक्ति या पदार्थ के वशीभूत होकर कार्य नहीं करता अपितु वह मोह रहित होकर कार्य करता है।

3.अहरहरर्थान् साधयते–

स्वाध्यायी व्यक्ति प्रतिदिन अपने अभीष्ट की सिद्धि करता रहता है। यास्क ने भी कहा–''योर्ध्वज्ञ सकलं भद्रमश्नुते नाकमेति ज्ञानविधूतपाप्मा।''

4.सुखं स्वपिति–

स्वाध्यायशील व्यक्ति जब मन को युक्त कर लेता है, अपराधीन

रहता है और अपने अभीष्ट की सिद्धि कर लेता है तो उसे अवश्य सुख की निद्रा आयेगी ही। संसार में प्रायः देखा जाता है कि मन के वशीभूत होकर व्यक्ति तनाव में जीता है और सुख की नींद सो नहीं सकता। इस तरह उसका शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास कदापि नहीं हो सकता।

5.परमचिकित्सक आत्मनो भवति–

स्वाध्यायी अपने आपका परमचिकित्सक हो जाता है क्योंकि जब वह किसी प्रकार की वितृष्णा नहीं रखता तो उसे किसी प्रकार का रोग नहीं लग सकता।

6.एकारामता भवति–

स्वाध्यायशील व्यक्ति को एकारामता प्राप्त होती है। ऐसा आराम जो अद्वितीय होता है। श्रम और राम से पूर्व आड़. उपसर्ग ने महत्त्वपूर्ण बना दिया है। यदि आराम चाहिए तो आश्रम करना पड़ेगा। अद्वितीयतत्त्व परमतत्त्व में रमना ही एकारामता है।

7.प्रज्ञावृद्धिर्भवति– यदि व्यक्ति स्वाध्यायश्रम में लगा रहता है तो उसकी प्रज्ञावृद्धि होती है। आचार्य चरक ने कहा– ''प्रज्ञापराधो हि मूलं सर्वरोगाणाम्।'' अर्थशास्त्र में आचार्य कौटिल्य ने कहा– श्रुताद् हि प्रज्ञापजायते प्रज्ञया योगः, योगादात्मवत्ता इति विद्यासामर्थ्यम्।''इस प्रकार स्वाध्याय–माहात्म्य शास्त्रों ने एवं शास्त्रकारों ने गाया है। अब इस स्वाध्याय से समाज एवं राष्ट्र को चलाने वाले चारों वर्ण अपना क्या दान करते हैं। महाभारतकार ने कहा–'अध्यायधनिनो विप्राः' ब्राह्मणवर्ण का व्यक्ति समाज को अपने स्वाध्याय के बल पर ज्ञान का दान करता है। क्षत्रियवर्ण का व्यक्ति स्वाध्याय माहात्म्य से न्याय तथा सुरक्षा का दान करता है। वैश्यवर्ण का व्यक्ति स्वाध्याय बल से राष्ट्र को अन्नादि दान कर राष्ट्र को समृद्ध करता है। और शूद्र वर्ण का व्यक्ति स्वाध्याय के बल पर राष्ट्र को गति प्रदान करता है। चारों आश्रमी एवं चारों वर्णों के व्यक्ति स्वाध्यायसे ही स्वयं को श्रेष्ठ बनाकर राष्ट्र को उन्नत करने में सहायक बन सकते हैं। संस्कृतवाड्.मय में यही स्वाध्याय का महत्त्व है।

shodh samiksha aur mulyankan

संदर्भ ग्रंथ

[1] निरूक्त 2.1.1 [2] निरूक्त 2.1.1[3] याज्ञवल्क्यस्मृति मिताक्षरा 1/42 [4] ऋग्वेद-9.67.32. [5] अथर्ववेद-19.71.1 [6] मनु. 2.28.1 [7] मनु. 2.28.1 [8] मनु. 2.28.1 [9] मनु. 2.166.1 [10] शत. 5.7.2 [11] आर्य समाज के दस नियम में ततीय [12] छान्दोग्योपनिशद्. 2.23.1 [13] योग दर्शन [14] योग दर्शन व्यास भाष्य [15] तैत्तिरीयोपनिषद् [16] तैत्तिरीयोपनिषद् [17] शत. 11.5.7.1 [18]'शतपथ [19] शतपथ [20] शतपथ 11.5.7.1 [21] गीता- 6.31 [22]शतपथ 11.5.7.1